एम. आर.बालाजी बनाम मैसूर राज्य
ए.आई.आर.1963 एस.सी. 649

तथ्य

कर्नाटक राज्य सरकार (तत्कालीन मैसूर राज्य सरकार) सन् 1958 से ही अपने नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की समुन्नति के लिये अनुच्छेद 15(4) के अधीन विशेष व्यवस्था का प्रयत्न कर रही थी और इस संबंध में जब भी कोई आदेश पारित किया उसकी विधिमान्यता को उच्च न्यायालय में रिट दायर करके चुनौती दे दी गई थी । और उच्च न्यायालय ने उसे मंजूर कर दिया था। इस मुकदमें में उक्त सरकार द्वारा सन्1962 में पारित किये गये अन्तिम आदेश को चुनौती देते हुए अनुच्छेद 32 के अधीन याचिकाएं दाखिल की गई थी। इस अंतिम आदेश से पहले सन् 1961 में एक आदेश पारित किया जा चुका था। सन् 1961 का आदेश उक्त राज्य सरकार द्वारा गठित नगन गौड़ समिति के नाम से अभिहित एक विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए पारित किया गया था जिसने उक्त राज्य के पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के लिये उनकी पहचान के मानदण्ड की समस्या की छानबीन की थी। उक्त समिति ने यह निर्णय लिया था कि वर्तमान परिस्थितियों में राज्य के पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण जातियों और समुदायों के आधार पर करना ही व्यावहारिक है और उन्हें दो श्रेणियों -पिछड़े और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े- में उपविभाजित किया जाना चाहिए । सन् 1962 का आदेश सारभूत रूप से इस समिति द्वारा निर्धारित शर्तो पर आधारित था। उक्त आदेश का सार यह था कि उसने (अनुसूचित जातियो और अनुसूचित जनजातियों के कोटे को निकालकर) अन्य पिछड़े वर्गों के लिये 50 प्रतिशत कोटा निर्धारित किया था। इस 50 प्रतिशत कोटे मे से 28 प्रतिशत कोटा तथा कथित पिछड़े वर्गों और शेष 22 प्रतिशत कोटा अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गो के लिये आरक्षित किया गया था। अनुसूचित जातियों का 15 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजातियों को 3 प्रतिशत कोटा स्थिर रखा गया था। फलतः इंजीनियरी, मेडिकल तथा अन्य प्राविधिक कालेजों में प्रवेश के लिये उपलब्ध सीटों में से 68 प्रतिशत सीटे वर्गों के लिये आरक्षित कर दी गई तथा मेरिट पूल के लिये केवल 32 प्रतिशत सीटें उपलब्ध रह गई। अतः उक्त आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि जिन समुदायों पर उक्त आदेश लागू होता है उनके सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण ऐसे ढ़ंग से किया गया है जो अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमेय नहीं है।

विवादक

(1) सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की पहचान करने के मानदण्ड क्या हैं?

(2) सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण करने में 'जाति' की क्या भूमिका है?

(3) क्या पिछड़े वर्गों का उक्त श्रेणियों में उपवर्गीकरण विधि मान्य है?

(4) क्या आरक्षण की प्रमात्रा अत्यधिक है?

उद्धरण

न्यायमूर्ति गजेन्द्र गड़कर :- अनुच्छेद 16(4) में प्रयुक्त प्रश्नावली पिछड़े वर्ग की व्याप्ति और सीमा पर विचार करते समय इस बात का ध्यान रखने की आवश्यकता है कि उक्त अनुच्छेद में पिछडेपन की जो संकल्पना की गई वह इस दृष्टि से सापेक्षिक नहीं है कि पिछड़े वर्गों में वे वर्ग शामिल कर लिये जाए जो समाज के सर्वाधिक समुन्नत वर्गो की तुलना में पिछड़े हुए हैं। यदि सर्वाधिक समुन्नत वर्गो के होने के कारण ऐसी सापेक्षित कसौटियां प्रयोग में लाई जाती है तो पिछड़े वर्गों के अनेक स्तर बन जाएंगें और उनमें से प्रत्येक अपने आपको अनुच्छेद 15(4) के अधीन पिछड़े वर्गो की सूची में शामिल किये जाने का दावा करेगा । उक्त सरकार के महाधिवक्ता ने हमारे सामने इस स्थिति को विवाद का मुद्दा नहीं बनाया है। अनुच्छेद 15(4) के अर्धीन पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन होना चाहिए। पिछड़ेपन का सामाजिक पिछड़ापन और शैक्षिक पिछड़ापन होना पर्याप्त नहीं है बल्कि वह सामाजिक और शैक्षिक दोनो प्रकार का पिछड़ापन होना चाहिए और यही बात हमें इस प्रश्न की ओर ले जाती है कि सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन का अवधारण किस प्रकार किया जाए।

हम पहले सामाजिक पिछड़ेपन के प्रश्न को लेते हैं। हम किस कसौटी से तय करें कि कोई वर्ग विशेष सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ है या नहीं नागरिकों के जिन समूहों पर अनुच्छेद 15(4) लागू होता है उन्हें "नागरिकों का वर्ग" बताया गया है न कि नागरिकों की जातियां। शब्दकोष में वर्ग शब्द का जो अर्थ दिया गया है उसके अनुसार वह प्रस्थिति, रैंक अथवा जाति के अनुसार समाज के विभाजन को प्रदर्शित करता है। दुर्भाग्यवश हिन्दू समाज के ढ़ांचे में जो जाति नागरिकों की प्रस्थिति के अवधारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। चाहे समाजशास्त्रियों और वेदों के विद्वानों के अनुसार जाति व्यवस्था मूल रूप से उपजीविका अथवा काम के आधार पर प्रारम्भ हुई हो किन्तु कालान्तर में में वह कठोर हो गई ओर उसकी नम्यता समाप्त हो चुकी है। जाति व्यवस्था के इतिहास को देखने के पता चलता है कि कार्य और जीविका पर टिके उसके मूलाधार पर बाद में धार्मिक संकल्पनाओं पर आधारित पवित्रता के बंधन कसते चले गये और वह ऐसी शाखाओं -प्रशाखाओं में बटती चली गई जिनसे उनमें अनम्यता और कठोरता आ गई। इस कृत्रिम विकास ने अनिवार्यत: श्रेष्ठता और हीनता की भावना पैदा करने तथा संकीर्ण जातिगत निष्ठाओं का पोषण करने की प्रवृत्ति को जन्म दिया। अत: इस समस्या को सुलझाते समय कि क्या नागरिकों का कोई वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ है या नहीं, नागरिकों के उक्त वर्ग की जाति पर विचार करना असंगत नहीं होगा।

तथापि, इस संबंध में इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि उक्त विशेष व्यवस्था नागरिकों के वर्गों के लिये अभिप्रेत है न कि उसी स्थिति वाले पृथक-पृथक नागरिकों के लिये। इस प्रकार यद्यपि नागरिकों के समूह की जाति सुसंगत हो सकती है किन्तु उसको अत्यधिक महत्व न दिया जाए। यदि नागरिकों के पिछड़े वर्गों का एकमात्र आधार उनकी जाति को बना दिया गया तो वह सदैव तर्कसंगत नहीं रहेगा और सम्भवत: उसमें स्वयं जातियों को ही शाश्वत बनाने का दुर्गुण आ जाएगा।

इसके अतिरिक्त यदि नागरिकों के समूह के सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण करने के लिए उसकी जाति को एकमात्र आधार बना लिया गया तो वह कसौटी भारतीय समाज के ऐसे अनेक प्रवर्गों के संबंध में अनिर्वाय रूप से असफल सिद्ध होगी जो जातियों को उन पारम्परिक दृष्टिकोण से मान्यता प्रदान नहीं करते जिस रूप से हिन्दू समाज करता है। कोई व्यक्ति किस आधार पर यह तय करेगा कि मुसलमान, ईसाई अथवा संघ या लिंगायत भी सामाजिक रूप से पिछड़े हुए है या नहीं। जाति पर आधारित उक्त कसौटी इन समूहों पर लागू तो होगी हीं नहीं साथ ही वह अनुच्छेद 15(4) के प्रवर्तन से इनके अपवर्जित किए जाने को मुश्किल से ही न्यायोचित ठहरा पाएगी। यह असम्भव नहीं है कि कुछ राज्यों में समूहों में रहने वाले कुछ ऐसे मुसलमान अथवा ईसाई अथवा जैन हों जो सामाजिक रूप से पिछड़े हुए हो। इसी कारण से हमारी राय में यद्यपि हिन्दुओं के संबंध में जातियां, नागरिकों के वर्गों अथवा समूहों के सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण करने के लिए सुसंगत कारक हो सकती हैं, जिन पर विचार किया जा सकता है किन्तु इस संबंध में उन्हें एकमात्र अथवा प्रमुख कसौटी नहीं बनायो जा सकता। अंन्तिम रूप से विश्लेषण करने पर हम यही पाते है कि एक बहुत बड़ी सीमा तक सामाजिक पिछड़ापन गरीबी का ही परिणाम है। नागरिकों के दयनीय रूप से गरीब वर्ग स्वत: हीं सामाजिक रूप से पिछड़ जाते है। उनकी समाज में कोई प्रस्थिति नहीं होती और इसलिए उन्हें पिछड़ा स्थान लेकर संतुष्ट होना पड़ता है। यह सच है कि गरीबी से उत्पन्न होने वाले सामाजिक पिछड़ेपन की गम्भीरता उस समय और भी बढ़ जाती है जब गरीब नागरिकों की जाति पर भी विचार किया जाता है किन्तु इससे यही सिद्ध होता है कि नागरिकों के पिछड़ेपन का अवधारण करने में जाति और गरीबी दोनों ही सुसंगत हैं।

नागरिकों को सामाजिक रूप से पिछड़ा बनाने में उनकी उपजीविका का भी योगदान रहता है। हमारे समाज में कुछ उपजीविकाएं ऐसी हैं जो पारम्परिक मान्यताओं के अनुसार हीन मानी जाती है और उन्हें अपनाने वाले नागरिकों के वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़ जाते हैं। व्यक्तियों के समुदायों के पिछड़ेपन के अवधारण में निवास-स्थान की भूमिका भी छोटी नहीं होती। इस संबंध में, एक प्रकार से सामाजिक पिछड़ापन ग्रामवासी भारत की समस्या है। अत: ग्रमीण क्षेत्रों में सामाजिक रूप से पिछड़ी स्थिति में रहने वाले नागरिकों के वर्ग अनुच्छेद 15(4) के क्षेत्राधिकार में आते हैं। निस्सन्देह यह

अवधारित करना एक बहुत अटिल समस्या है कि सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग कौन-कौन से है। समाजशास्त्र की दृष्टि से इस समस्या को हल करने में सामाजिक और आर्थिक पहलू महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है तथा मह अवधारित करने के लिए कि कौन-कौन से वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़े हुए हैं, उचित मानदण्ड तैयार करेगा, स्पष्टत: एक बहुत ही जटिल कार्य है। इसके लिए व्यापक छानबीन और आंकड़ों का संग्रहण करने तथा उक्त आंकड़ों की युक्तियुक्त और वैज्ञानिक ढंग से जांच करने की आवश्यकता होगी। यह कार्य उस सरकार का है जिसकी मंशा अनुच्छेद 15(4) के अधीन कार्रवाई करने की होती है। प्रस्तुत याचिकाओं के निपटारे के लिए इस न्यायालय को केवल यह तय करना है कि क्या आक्षिप्त आदेश को पारित करने के बारे में सरकार द्वारा प्रयोग में लाई गई कसौटियां अनुच्छेद 15(4) के अधीन विधिमान्य हैं? यदि यह प्रतीत होता है कि सरकार द्वारा उस संबंध में आदेश में प्रयोग में लाई गई कसौटी अनुचित और अविधिमान्य है तो उस कसौटी के आधार पर किए गए सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के संबंध में यह अभिनिर्धारित करना ही होगा कि यह अनुच्छेद 15(4) की अपेक्षाओं से असंगत है।

तो फिर उक्त राज्य सरकार ने आक्षिप्त आदेश को पारित करने के बारे में कौन सी कसौटी का प्रयोग किया है? हम पहले ही देख चुके हैं कि उक्त राज्य सरकार द्वारा नियुक्त नगन गौड समिति का झुकाव किसी समुदाय के सामाजिक पिछड़ेपन के प्रश्न के अवधारण का लगभग एक मात्र आधार जाति को मानने की और था। यद्यपि उक्त समिति ने निस्सन्देह प्रासंगिक रूप से समुदाय की आम सामाजिक स्थिति की एक सहायक कारक बनाया जा सकता है किन्तु जिस ढंग से उसने पिछड़े और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गो के नामों की सूची तैयार की है उससे इस बात में सन्देह करने की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती कि उनके मस्तिष्क पर हावी कसौटी जाति ही थी, जो यदि एकमात्र नहीं तो प्रधान अवश्य थी। जब हम आक्षिप्त आदेश पर ध्यान देते हैं तो स्थिति बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है। उक्त आदेश ने 10 जुलाई 1961 के पुर्ववंर्ती आदेश की ही आरक्षण की प्रगास्ता के बारे में कुछ परिवर्तन करके अंगीकार कर लिया है। अत: यह देखने के लिए उक्त पूर्ववर्ती आदेश की जांच करना आवश्यक है कि पिछड़े वर्गो का वर्गीकरण करते समय सरकार ने किस कसौटी का प्रयोग किया था। 10 जुलाई, 1961 के आदेश की उद्देशिका में स्पष्ट और असंदिग्ध रूप से यह कहा गया है कि समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि वर्तमान परिस्थितियों में राज्य के पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करने की एकमात्र व्यावहारिक विधि यही है कि जातियों और समुदायों को उसका आधार बनाया जाए और राज्य सरकार इसे स्वीकार करती है। दूसरे शब्दों में, उक्त आदेश के बारे में उस स्थिति में जिसमें वह है, इस संबंध में सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं है कि राज्य सरकार ने पिछड़े और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण केवल उनकी जातियों को व्यावहारिक आधार मानकर किया था। यह सच है कि पिछड़े वर्गों में लिंगायतों को शामिल किए जाने के समर्थन में कुछ अन्य कारकों का उल्लेख

उक्त आदेश में किया गया है, किन्तु नगन गौड़ समिति की रिपोर्ट और राज्य सरकार द्वारा 10 जुलाई, 1961 तथा 31 जुलाई, 1962 को पारित किए गए आदेशों से इस बारे में कोई संकेत नहीं मिलता कि वर्गीकरण के प्रश्न को हल करने के लिए जाति से भिन्न कोई अन्य कसौटी प्रयोग में लाई गई थी। विद्वान महाधिवक्ता ने यह तर्क देकर कि 10 जुलाई, 1961 के आदेश की उद्देशिका में किए गए कथन का शाब्दिक अर्थ न लगाया जाए और उसके सुसंगत अंश में प्रयुक्त शब्द बनावटी नहीं यह सुझाया है कि उक्त आदेश का आधार एकमात्र जातियां नहीं हैं। हम इस दलील को नहीं मानते। हमने नगन गौड़ समिति की रिपोर्ट और उसके द्वारा की गई सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए उक्त दोनों आदेशों पर विचार किया है और हम इस बारे में संतुष्ट है कि सरकार ने नागरिकों के सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों का जो वर्गीकरण किया है वह केवल जातियों के आधार पर हुआ है और उसमें अन्य सुसंगत कारकों का ध्यान नहीं रखा गया है। ऐसी स्थिति में जिन समुदायों पर उक्त आक्षिप्त आदेश लागू होता है, उनके सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण एक ऐसे ढंग से किया गया है जो अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमेय नहीं है और जिससे वर्गीकरण में एक ऐसी अशक्तता आ जाएगी जो उसकी विधिमान्यता के लिए घातक होगी।

हमारे विचार के लिए दूसरा प्रश्न नागरिकों के वर्गों के शैक्षिक पिछड़ेपन से संबंधित है। नगन गौड़ समिति की रिपोर्ट और आक्षिप्त आदेश ने उक्त राज्य के सभी हाई स्कूलों की अंतिम तीन कक्षाओं में उक्त समुदाय के प्रति हजार नागरिकों में, छात्रों, की औसत संख्या को यह प्रश्न हल करने का आधार बनाया है। समिति उसे उपलब्ध कराए गए आंकड़ों जो निश्चित रूप से निकटतम है किन्तु पूर्णतः यथार्थ नहीं है, के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंची थी कि उक्त राज्य के सभी हाई स्कूलों की अंतिम तीन कक्षाओं में छात्राओं की संख्या का राजकीय औसत प्रति हजार 6.9 था। समिति ने यह तय किया था कि वे सभी जातियां जिनके छात्रों का औसत राज्य के प्रति हजार 6.9 के औसत से कम है, पिछड़े समुदाय मान ली जाएं और उसने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यदि किसी समुदाय के छात्रों का औसत राजकीय औसत के 50 प्रतिशत से कम हो तो उसे अपेक्षाकृत अधिक पिछड़ा वर्ग मान लिया जाए। यह स्वीकार किया जा सकता है कि नागरिकों के किसी वर्ग के पिछड़ेपन की अवधारण करने में जनगणना रिपोर्टों के साक्षरता संबंधी आकड़ों की कसौटी पर्याप्त नहीं होगी, किन्तु इसमें संदेह है कि हाई स्कूल की अंतिम तीन कक्षाओं में छात्रों की औसत संख्या की कसौटी शैक्षिक पिछड़ेपन का अवधारण करने के लिए पर्याप्त है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उक्त कसौटी का आशय यह अवधारित करना है कि शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग कौन-कौन से हैं तथापि उसके स्तर को इतना ऊंचा रखना अवश्यक अथवा उचित नहीं हैं जितना उक्त समिति ने रखा है। यदि हम यह मान भी लें कि प्रयोग में लाई गई उक्त कसौटी युक्तियुक्त तथा अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमेय है तो इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता कि क्या उन जातियों अथवा समुदायों को शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग

मानना वैध होगा जिनकी शिक्षा का स्तर राजकीय औसत से थोड़ा-सा नीचे है। यदि प्रति हजार 6.9 के राजकीय औसत से नीचे होने की कसौटी पर खरे उतरने वाले किसी समुदाय का शैक्षिक स्तर उक्त औसत से थोड़ा-सा नीचे है तो उसे पिछड़ा हुआ नहीं माना जा सकता। नागरिकों के ऐसे वर्ग स्पष्ट रूप से पिछड़े हुए वर्ग हैं जिनमें छात्रों की संख्या का औसत राजकीय औसत के 50 प्रतिशत से नीचे है। अतः हमारी राय में सरकार का पिछड़े वर्गों की सूची मे उन जातियों अथवा समुदायों को शामिल करना न्यायोचित नहीं है जिनमें प्रति हजार छात्रों की संख्या का औसत राजकीय औसत से किंचित ऊपर या बहुत निकट या थोड़ा-सा नीचे है।

आपको याद होगा कि नगन गौड़ समिति ने लिंगायतों की पिछड़ा वर्ग न मानने की सिफारिश की थी परन्तु सरकार का निर्णय इससे भिन्न है। जुलाई 1961 के आदेश के अनुसार यह निर्णय लेते समय सरकार का मत यह रहा है कि निकटतम पूर्णांक की सहायता से वस्तुओं की संख्या की तरह निकाले गए इन आंकड़ों से ऐसे निर्धारण संभव नही हैं जो गणित की दृष्टि से पूर्णतः शुद्ध हों। इस प्रकार राजकीय औसत प्रति हजार 6.9 से बढ़ाकर 7 कर दिया गया। राजकीय औसत को बढ़ाकर 7 कर दिए जाने के बाद भी लिंगायत समुदाय की स्थिति यह थी कि उसके प्रति हजार छात्रों की संख्या का औसत उक्त समिति के निष्कर्ष के अनुसार 7.1 और सरकार के निर्णय के अनुसार 7 था और तो भी उसे उक्त आदेश के अधीन नागरिकों का शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ एक वर्ग अभिनिर्धारित किया गया है। यह परिणाम राजकीय औसत में 0.1 जोड़कर और लिंगायतों के औसत में से 0.1 घटाकर प्राप्त किया गया है। इसी प्रकार गनिगों को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल कर लिया गया है जिनमें प्रति हजार छात्रों की संख्या का औसत 7 है। यदि राजकीय औसत 6.9 या 7 है तो हमारी राय में उन समुदायों को शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ मानना स्पष्टतः त्रुटिपूर्ण होगा जिनमें छात्रों की संख्या का औसत राजकीय औसत के बराबर है।

मुसलमानों के संबंध में उक्त समिति में बहुमत इस पक्ष में था कि उनका पूरा समुदाय सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ मान लिया जाए। इस निष्कर्ष का उल्लेख निष्कर्ष मात्र के रूप में किया गया है और उसके समर्थन में किन्हीं आंकड़ों अथवा कारणों का हवाला नहीं दिया गया है। इस समुदाय के छात्रों की संख्या का औसत प्रति हजार 5 है जो हमारी राय में, राजकीय औसत से इतना कम नहीं है कि उसके आधार पर इसे मैसूर राज्य में शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ वर्गमान लिया जाए। अतः हम इस तर्क से संतुष्ट नहीं है कि सरकार का यह सोचना न्यायसंगत है कि वे समुदाय अथवा जातियां पिछड़े वर्ग मान लिए जाएं जिससे की संख्या का औसत राजकीय औसत के बराबर या उससे थोड़ा-सा नीचे है। यदि छात्र संख्या का राजकीय औसत शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन की कसौटी बनाया है तो उससे संगत राय यही बनेगी कि नागरिकों के वर्ग शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग माने जा सकते हैं जिनमें छात्र संख्या का औसत राजकीय औसत से काफी अथवा सांख्यिक रूप से कम है। इस, मुद्दे

के संबंध में हम कोई निश्चित नियम निर्धारित करने का सुझाव नहीं दे रहे हैं क्योंकि इस मामले पर विचार करने तथा इसे अनुच्छेद 15(4) की अपेक्षाओं के अनुरूप तय करने का काम उक्त सरकार का ही है।

इस संबंध में हम यह कहना आवश्यक समझते हैं कि उक्त आदेश द्वारा पिछड़े वर्गों और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गों के रूप में किया गया उपवर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के अधीन न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता। अनुच्छेद 15(4) ऐसे पिछड़े वर्गों के लिए विशेष व्यवस्थाएं किए जाने को प्राधिकृत करता है जो वास्तव में पिछड़े हुए हैं। पिछड़े वर्गो की दो श्रेणियां बनाने में आक्षिप्त आदेश का अभिप्राय नागरिकों के उन सभी वर्गो के फायदे के लिए उपाय खोज निकालना है जो उक्त राज्य के सर्वाधिक समुन्नत वर्गों की तुलना में कम समुन्नत हैं और हमारी राय में ऐसा करना अनुच्छेद 15(4) की परिधि में नहीं आता। आक्षिप्त आदेश में प्रयुक्त तरीके के फलस्वरूप उक्त राज्य की लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या पिछड़ी हुई मान ली गई है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त आदेश वस्तुतः किस प्रकार राज्य की जनसंख्या को सर्वाधिक समुन्नत जनसंख्या और शेष जनसंख्या में विभाजित करता है और शेष जनसंख्या की दो श्रेणियां-पिछड़ी और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़ी बनाता है। अतः उक्त दो श्रेणियों में किया गया वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) से समर्पित नहीं है।

निर्णय

(1) सामाजिक पिछड़ेपन के अवधारण के लिए जातियां, गरीबी, उपजीविकाएं, निवास-स्थान यदि कुछ सुसंगत कारक हैं। शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन के संबंध में न्यायालय ने कहा कि हाईस्कूल की अन्तिम तीन कक्षाओं में छात्रों की संख्या के औसत की कसौटी को उचित माना जाना सन्देहास्पद है। न्यायालय ने आगे कहा यदि यह मान भी लिया जाए कि उक्त कसौटियां विधिमान्य थी और राजकीय औसत प्रति हजार 6.9 था तो भी उक्त कसौटी पर खरा उतरने वाला कोई समुदाय पिछड़ा हुआ नहीं माना जा सकता। उसका स्तर राजकीय औसत की तुलना में काफी नीचा होना चाहिए।

(2) यद्यपि भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में 'जाति' सुसंगत है तो भी वह सामाजिक पिछड़ेपन की एकमात्र अथवा प्रधान कसौटी नहीं बनाई जा सकती। इससे समाज में जाति प्रथा का दुर्गुण शाश्वत बन जाएगा।

(3) पिछड़ी और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़ी श्रेणियों में पिछड़ेपन का उपवर्गीकरण संविधानिक रूप से अनुमेय नहीं है।

(4) अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों के लिए किए गए कुल 68 प्रतिशत आरक्षण के बारे में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वह अत्यधिक है।